बुद्धवर्ष २५४५, ज्येष्ठ पूर्णिमा, ६ जून, २००१ वर्ष ३० अंक १२

धम्मवाणी

आरद्धवीरिये पहितत्ते, निच्चं दळ्हपरक्कमे।
समग्गे सावके पस्स, एतं बुद्धान वन्दनं॥

– थेरीअपदान २.२.१७१

देखो! ये श्रावक किस प्रकार (एकत्र होकर) समग्र रूप से साधना में लगे हैं। (चित्त-शुद्धि के लिए) नित्य दृढ़ पराक्रम करते रहते हैं। सचमुच यही है बुद्धों की वंदना!

विपश्यना यात्रा २००१

(दिनांक १७-२ से ०२-०३-२००१ तक)

विपश्यना यात्रा। सामान्य तीर्थ यात्राओं से भिन्न एक धर्म-यात्रा। चलता-फिरता विपश्यना शिविर। संसार के १८ देशों से लगभग ७०० विपश्यी-साधक, साधिकायें। बोली-भाषा भिन्न। वेश-भूषा भिन्न। भूमंडल पर रहने वाले भूमिपुत्र-पुत्रियों की अनोखी अंतर्यात्रा। चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते सभी अवस्थाओं में सजग रहते हुए, समता की यात्रा। अनूठी यात्रा। जीवन जीने की कला सीखने की यात्रा। एक ऐतिहासिक घटना।

विश्व विपश्यनाचार्य कल्याणमित्र पूज्य श्री सत्यनारायण गोयन्काजी तथा माताजी के सान्निध्य में यह विपश्यना यात्रा सम्पन्न हुई। उन्होंने अपने धर्म-पुत्र-पुत्रियों को विपश्यना के संदर्भ में तीर्थ-यात्रा का प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया। तीर्थ कोई कर्म-कांडपूरा करना नहीं है। उसका एक स्वस्थ आयाम है। पूज्य गुरुदेव ने तीर्थयात्रा के वास्तविक महत्व को इस विपश्यना यात्रा द्वारा समझाया, प्रयोगात्मक रूप दिया और इसके उस विस्मृत पक्ष को उजागर किया। आख्यात किया।

इसके पूर्व विपश्यना की दो धर्म यात्रायें पूरी हो चुकी हैं। पहली यात्रा १२ से २४ फरवरी, १९८२ में; जिसमें लगभग १२० साधक-साधिकायेंथीं। यह भारत की सर्व प्रथम विपश्यना-यात्रा थी। दूसरी यात्रा गत वर्ष जनवरी, २००० में सयाजी ऊ बा खिन की जन्म-शताब्दी के अवसर पर म्यंमा (ब्रह्मदेश पुराने समय की स्वर्ण-भूमि) में हुई, जिसमें ३२ देशों से लगभग ८०० साधक-साधिकाओंने भाग लिया था। यह म्यंमा के आचार्य-परंपरा के प्रति कृतज्ञता थी। उसकी अभिव्यक्ति थी। उन-उन स्थानों पर ध्यान-साधना द्वारा आचार्य-परंपरा के प्रति शुद्ध-चित्त की चेतना से कृतज्ञता प्रकट करनी थी, जिन स्थानों पर पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में साधकों ने यह अनुभव किया कि ब्रह्म-देश की पावन धरती स्वर्ण-भूमि ने महाथेर सोण और उत्तर द्वारा सम्राट अशोक के समय ले जायी गयी इस विपश्यना विद्या को, भारत से लाए गये अनमोल धर्मरत्न को धरोहर के रूप में संभाल कर रखा। अरहंत आचार्य धर्मदर्शी के सत्प्रयास से यह दक्षिण बर्मा से मध्यवर्ती क्षेत्र पगान पहुँची और कालांतर में माण्डले (रतनपुर), तथा सगाईं पर्वत श्रेणियों की उपत्यका में गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा स्वस्थ रूप में जीवित रही। इसी कड़ी के महान संत भिक्षुप्रवर लेटी सयाडो हुए जिनके गृहस्थ शिष्य सया तै' हमारे दादा गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन के आचार्य हुए। आचार्य ऊ बा खिन के पट्ट-शिष्य हमारे वर्तमान आचार्य पूज्य गुरुजी तथा माताजी हैं। हम कृतज्ञ हैं उस आचार्य परंपरा के जिसने विश्व कल्याणकारिणीभगवती विपश्यना विद्या को ही नहीं बल्कि विपुल त्रिपिटक वाङ्मय को भी शुद्ध रूप में संभाल कर रखा। तभी तो हमारे वर्तमान आचार्य अपने गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन के चरणों में १४ वर्षों तक इस विद्या को सीखते रहे, तभी यह पुनः भारत में आ सकी और हमें प्राप्त हुई। भारत का कल्याण करती हुई यह संपूर्ण विश्व का कल्याण कर रही है।

जिस धरती पर विपश्यना जैसी विद्या जन्मी, स्वस्थ रूप से जीवित रही तथा ५०० वर्षों तक लोक-कल्याणकरतीरही, वह कोई पौराणिक घटना नहीं थी, बल्कि एक प्रत्यक्ष ऐतिहासिक सत्य है।

राजधानी कपिलवस्तु के महाराज सुद्धोदन की पटरानी महामाया की कोख से राजकुमार सिद्धार्थ का जन्म **लुम्बिनी** के मनोहारी हरे-भरे वनप्रदेश में हुआ। कपिलवस्तु में राज्य-सुख भोगा। २९ वर्ष की अवस्था में उस सुकुमार राजकुमार ने सत्य की खोज में गृहत्याग किया। **राजगृह** में **उरुवेल** के जंगल में दुष्कर तपस्या की। ३५ वर्ष की आयु में आज के बोध-गया में **बोधि-वृक्ष** के नीचे अनुत्तर बोधि प्राप्त की। लोक-कल्याणकी भावना से ओतप्रोत, करुणचित्तसे लोकावलोकन कर उन्होंने अपना प्रथम धर्मोपदेश बनारस के समीप **सारनाथ** में ऋषिपत्तन नामक मृगदाव में पाँच प्रव्रजितों को दिया। उत्तरोत्तर सारे जम्बूद्वीप में धर्म की गंगा बह चली।

इनके ध्यान के दो प्रमुख केन्द्र हुए – एक **राजगृह** में **वेणुवन विहार,** दूसरा **श्रावस्ती** में **जेतवन विहार** । ये ४५ वर्षों तक लोगों को धर्म बांटते रहे, धर्म सिखाते रहे, यही विपश्यना विद्या सिखाते रहे।

अस्सी वर्ष की पकी हुई अवस्था में इन्होंने अपना शरीर त्याग किया –मल्लों की राजनगरी **कुशीनगर** के समीप एक शाल वन में। अंतिम सांस छोड़ते-छोड़ते भी करुणाविगलितचित्त से उन्होंने सुभद्र

परिव्राजक को धर्म सिखाते हुए ही महापरिनिर्वाण को प्राप्त किया।

क्या है विपश्यना?

विपश्यना भारत की एक अत्यंत पुरातन ध्यान-विधि है। यह एक ऐसा सरल एवं कारगर उपाय है जिससे मन को वास्तविक शांति प्राप्त होती है और सुखी, उपयोगी जीवन बिताना सम्भव हो जाता है। विपश्यना का अभिप्राय है कि जो वस्तु सचमुच जैसी है, उसे उसी प्रकार जान लेना। आत्म-निरीक्षण द्वारा मन को निर्मल करते-करते ऐसा होने ही लगता है। हम अपने अनुभव से जानते हैं कि हमारा मानस कभी विचलित हो जाता है, कभी हताश, कभी असन्तुलित। इस कारणवश जब हम व्यथित हो उठते हैं तब अपनी व्यथा केवल अपने तक सीमित नहीं रखते, दूसरों को भी बांटने लगते हैं। निश्चय ही इसे आदर्श जीवन नहीं कह सकते। हम सब चाहते हैं कि हम स्वयं सुख-शांति का जीवन जीयें और दूसरों को भी ऐसा जीवन जीने दें, पर ऐसा कर नहीं पाते। अतः प्रश्न उठता है कि हम संतुलित जीवन कैसे बितायें?

विपश्यना हमें इस योग्य बनाती है कि हम अपने भीतर शांति और सामंजस्य का अनुभव कर सकें। यह चित्त को निर्मल बनाती है। यह चित्त की व्याकुलता और इसके कारणों को दूर करती है। यदि कोई इसका अभ्यास करता रहे तो कदम-कदम आगे बढ़ता हुआ अपने मानस को विकारों से पूरी तरह मुक्त करके नितान्त विमुक्त अवस्था का साक्षात्कार कर सकता है।

* * *

विपश्यना सीखने के लिए आवश्यक है कि किसी योग्यता-प्राप्त विपश्यना आचार्य के सान्निध्य में एक दस-दिवसीय आवासीय शिविर में भाग लिया जाये।

इस प्रकार के एक या अनेक शिविर किये हुए अथवा दीर्घ शिविर किये हुए साधक-साधिकाओं ने, आचार्य के सहायक-सहायिकाओंने, अपने धर्म-पिता एवं माता के सान्निध्य में इस चलते-फिरते विपश्यना के शिविर में भाग लिया।

विपश्यना करते हुए धर्मयात्रा। तीर्थ यात्रा। उन स्थानों की यात्रा पर ये सभी विपश्यी साधक-साधिकायेंनिकली थीं, जहाँ उस महामुनि ने जन्म लिया था; बोधि-प्राप्त की थी; धर्म-चक्र प्रवर्त्तन किया था; जहाँ उनके उपासक-उपासिकाओंने विहार स्थापित किये थे और जहाँ उन्होंने जीवन यात्रा समाप्त की थी। क्रमशः लुम्बिनी, कपिलवस्तु (नेपाल), बोध-गया, सारनाथ, राजगीर, वैशाली, श्रावस्ती, और कुशीनगर। परंतु हमारी यात्रा का क्रम वैसा नहीं हो सका। हमारी विपश्यना-यात्रा का आरंभ मुंबई सेंट्रल से हुआ। अतः हम पश्चिमी रेलवे से बनारस (सारनाथ), गया (बोध-गया), राजगीर, नालंदा, वैशाली, गोंडा (श्रावस्ती), गोरखपुर (कुशीनगर), होते हुए उनके जन्म-स्थान लुम्बिनी (नेपाल) पहुँचने वाले थे।

इस कल्प के चौथे बुद्ध जिन्होंने विपश्यना विधि की खोज की, जिसे उन्होंने मुक्त-हस्त से सबको बांटा, उन भगवान गोतम बुद्ध का जन्म ईसा-पूर्व ५६३ तथा निर्वाण ई. पूर्व ४८३ में हुआ था। ३५ वर्ष की अवस्था में बोधि प्राप्त कर ४५ वर्ष तक लोक-सेवा में लगे रहे। वे जिन स्थानों पर प्रमुख रूप से रहे, तथा जहाँ उन्होंने विपश्यना विधि सिखायी उन स्थानों का दर्शन करना मात्र उद्देश्य नहीं था। उद्देश्य था उन पावन स्थानों पर, गुरुदेव एवं माताजी के निर्देशन में विपश्यना का अभ्यास करना, उन स्थानों का परिचय प्राप्त करना, वहाँ के ऐतिहासिक साक्ष्यों का साक्षी बन धर्म-संवेग जगाना और उन पुण्य स्थलियों पर ध्यान कर प्रभूत पुण्यार्जन करना।

* * *

दिनांक १७-०२-२००१, शनिवार।

स्थानः मुंबई सेंट्रल रेल्वे स्टेशन।

पूरी ट्रेन रिज़र्व थी। कुल १८ बोगियाँ। अति उत्तम व्यवस्था। सभी के लिए निश्चित सायिका। सभी के गले में फोटो सहित पहचान-पत्र का लटकता हुआ लाकेट। स्वाभाविक कोलाहल में धर्म की तरंग। सभी विपश्यी, सुव्यवस्थित। नियमानुसार अपने स्थान पाने की प्रारंभिक चहल-पहल। इसी बीच पूज्य गुरुजी तथा माताजी का आगमन। सहज श्रद्धा से साधक-साधिकाओंका नमन। एक भव्य दृश्य। कुछ ही घंटों में सभी अपने-अपने स्थान पर पहुँच गये। पूज्य गुरुजी एवं माताजी भी अपने डब्बे में सवार हो गये। मन में धर्म का उमंग, उत्साह, उल्लास। भावी दस दिवसीय यात्रा के दौरान चलते-फिरते शिविर में विपश्यना करने का दृढ़ संकल्प। इस धर्ममय वातावरण में धर्म-यात्रा के लिए हमारी गाड़ी मध्य-रात्रि (११-४५) बजे मुंबई से रवाना हुई।

* * *

दिनांक १८-०२-२००१, रविवार।

एक दिवसीय विपश्यना शिविर रेल में

दिनांक १८- ०२- २००१। गतिमान धर्म-यान। हर बोगी में धर्म-सेवक तथा वर्दी पहने हुए विशेष सुरक्षा-कर्मी गार्ड। हर बोगी में स्पीकर की उचित व्यवस्था। सौमनस्यता से भरे साधक-साधिकायें।

प्रातःकाल स्पीकर से पूज्य गुरुजी की वाणी में टेप की गयी प्रातःवंदना गूँज उठी। वातावरण धर्म-मय हो गया। सभी विपश्यी अपने-अपने स्थान पर ध्यान मग्न। सामान्य शिविरों-सा कठोर प्रतिबंध नहीं। उठते-बैठते, चलते-फिरते, दैनिक कार्य सम्पन्न करते हुए सजग, जागरूक, अंतर्मुखी। राजकोट के विपश्यी साधक द्वारा भोजन बनाने और परोसने वालों की पूरी पार्टी। गाड़ी में ही भोजन पकाने का प्रबंध। ठीक समय पर सभी के समक्ष नाश्ता हाजिर। पूज्य गुरुजी ने सामान्य शिविरों के अनुसार ही पंचशील दिया, साधकों ने धर्म याचना की, आनापान लिया। सभी आनापान करते रहे। अपने-अपने आवश्यक नित्यकर्म भी करते रहे। आर्य-मौन पालन में छूट थी। संपूर्ण ट्रेन का वातावरण ध्यान-मय हो गया। ट्रेन, ट्रेन नहीं थी; रेलगाड़ी, रेलगाड़ी नहीं थी; चक्कों पर गतिमान धर्म-यान था। दोपहर को भोजन। अपरान्ह में विपश्यना मिली। सारा वातावरण धर्म की तरंगों से तरंगित हो उठा। सायंकाल मैत्री का सत्र। फिर भोजन और विश्राम।

हमारी गाड़ी १२ घंटे लेट हो गयी। फलतः हर कार्य-क्रम एक दिन लेट हो गया। हमें दिनांक १९ को सारनाथ पहुँचना था। हम २० फरवरी को सारनाथ पहुँचे।

दिनांक २०-०२-२००१, मंगलवार।

सारनाथः धर्म यात्रा का पहला पड़ाव

बाहर बसों का प्रबंध पहले से ही किया गया था। धर्मयात्री बस द्वारा वाराणसी से १० किलोमीटर दूर सारनाथ भ्रमण के लिए

चले। भगवान बुद्ध के समय में इसे **इसिपत्तन** याने ऋषिपत्तन कहते थे और इसके समीप ही मृगदाव था।

चौखंडी – भगवान बुद्ध बोधि प्राप्ति के बाद अपने पाँच साथियों को मुक्तिदायिनी विद्या सिखाने के लिए ऋषिपत्तन आये। उससे आधा मील पहले ही वे पाँचों साथी मिल गये। जिस स्थान पर वे सर्वप्रथम मिले थे कालांतर में वहाँ भगवान के अनुयायियों ने इस घटना की स्मृति में एक स्तूप खड़ा किया जिसके खंडहर को आज **चौखण्डी** कहते हैं।

धम्मेक स्तूप – १०४ फीट ऊँचा विशाल स्तूप। सम्राट अशोक द्वारा उस स्थान पर निर्मित कराया गया जहाँ भगवान ने **धर्म-चक्र प्रवर्त्तन** किया था। पूर्व समय में यह धर्मचक्र स्तूप कहलाता था।

धम्मराजिक स्तूप – धर्मराजा भगवान बुद्ध के सम्मान में सम्राट अशोक ने इस दूसरे स्तूप का निर्माण करवाया था। कालांतर में नासमझों ने इसे तोड़ डाला। अब तो इसकी केवल नींव भर बची है। इससे प्राप्त बहुमूल्य वस्तुएं हथिया ली गईं तथा भगवान की अस्थियों को गंगा में यह कहकर बहा दिया गया कि इससे भगवान बुद्ध की मुक्ति हो जायगी। अज्ञानजन्य कृतघ्नता और बर्बरता की यह एक दर्दनाक कहानी है।

अशोक स्तंभ – इसी के समीप अशोक ने एक भव्य स्तंभ खड़ा किया था। यह भी नासमझ लोगों द्वारा तोड़ा गया। यह ५०-फीट ऊंचा था। अब मात्र ७-८ फुट टूटा हुआ भाग ही जमीन में गड़ा हुआ खड़ा है। यही वह स्तंभ था जिसके सिरे पर चार सिंहों की अनुपम कलापूर्ण मूर्तियाँ व अशोक-चक्र स्थापित थे जो कि इस समय सारनाथ की म्यूजियम में रखे हुए हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने कृतज्ञताजन्य सम्मान सहित इसे अपने राज-चिन्ह के रूप में अपनाया। राष्ट्रीय ध्वज में अशोक-चक्र को स्थान दिया। भगवान ने इसी स्थान पर साठ अरहंतों के प्राथमिक संघ की स्थापना की थी। भगवान द्वारा स्थापित यह धर्म-संघ संगठित रह कर चिरकाल तक लोकसेवा कर सके, इसे ध्यान में रख कर ही सम्राट अशोक ने इस पर यह शब्द उत्कीर्ण करवाये थे कि कोई व्यक्ति संघ-भेद का दोषी न बने।

यह वही स्थान है जहाँ भगवान ने इन साठ धर्मदूतों को **"चरथ भिक्खवे, चारिकं"** का उपदेश देकर बहुत लोगों के हितसुख के लिए धर्मचारिका करने भेजा था ताकि सभी दिशाओं में शाक्यसिंह की कल्याणी वाणी की धर्म-गर्जना हो और अनेकों का कल्याण करता हुआ धर्म-चक्र चिरकाल तक प्रवर्तित होता रहे।

प्राचीन मूलगंधकुटी विहार – इसके पास मूलगंधकुटी विहार के नाम से प्रसिद्ध यह खण्डहर आज भी अपनी गौरव गाथा कह रहा है। ६३८ ई. में आए हुए चीनी यात्री ह्वेनसांग ने २०० फुट ऊंचे इस भव्य-मंदिर का विशद वर्णन किया था। यहीं भगवान ने कुछ समय निवास किया था।

नवीन मूलगंधकुटी विहार – १९२२ ई. में अनागारिक धर्मपाल जी द्वारा निर्माण कराया गया। इसमें तक्षशिला से प्राप्त भगवान की पवित्र शरीर-धातु सुरक्षित रखी गयी है।

अनुराधपुर (श्री लंका) से पुरातन बोधिवृक्ष की टहनियां लाकर समीप में रोपी गयीं, जो अब बड़े वृक्ष के रूप में लहलहा रही हैं।

इस विहार के परिसर में पुरातन भवनों के अनेक टूटे-फूटे खण्डहर खड़े हैं जिनमें से एक मूलगंधकूटी का अवशेष माना जाता है जहाँ भगवान स्वयं ध्यान किया करते थे। एक चंक्रमण का स्थान है जहाँ साधक चलते हुए ध्यान करते थे।

कुछ दूरी पर महाबोधि सोसायटी का नवनिर्मित भवन है और सरकार के पर्यटन विभाग का म्यूजियम है, जिसमें इस स्थान से उत्खनित महत्वपूर्ण वस्तुएं प्रदर्शित की गयी हैं।

सारनाथ की महत्ता

१- यहीं भगवान ने अपने पाँचों साथियों को वैशाख पूर्णिमा की चांदनी रात में पहला उपदेश दिया जो **'धर्मचक्र प्रवर्त्तन'** के नाम से प्रसिद्ध हुआ। संक्षेप में कहें तो आशुफलदायी विपश्यना विधि के सैद्धांतिक पक्ष को उन्होंने उजागर किया तथा व्यावहारिक पक्ष का अभ्यास कराया। शील, समाधि और प्रज्ञा ही बुद्ध की व्यावहारिक शिक्षा है जो विपश्यना साधना के अभ्यास से पुष्ट होती हैं।

इस उपदेश से यह सिद्ध होता है कि धर्म को धारण करके उसे अपने जीवन में उतारना ही बुद्ध की शिक्षा का चरम लक्ष्य है। उनकी इस शिक्षा से लाभान्वित हो कर एक सप्ताह के भीतर उनके पाँचों साथी निर्वाण का प्रथम साक्षात्कार कर एक के बाद एक स्रोतापन्न अवस्था को प्राप्त हुए।

२- तदनंतर उन्होंने **अनत्तलक्खणसुत्त** का उपदेश दिया जिससे कि वे अनित्यबोध तथा दुःखबोध के आधार पर विपश्यना करते हुए देहात्मबुद्धि और चित्तात्मबुद्धि से छुटकारा पाकर अनात्मबोध में पुष्ट हो भवमुक्त अरहंत अवस्था को प्राप्त हुए। इस प्रकार स्वयं भगवान बुद्ध सहित छह अरहंतों का संघ तैयार हुआ। भगवान ने पहली बार यहीं पर **भिक्षु संघ** की स्थापना की।

३- बोधिसत्व सिद्धार्थ को खीर भेंट करने वाली सुजाता के पुत्र **यश** को भगवान ने यहीं पर मुक्तिदायिनी विद्या सिखायी, जिससे कि वह अरहंत फललाभी हुआ।

४- भगवान बुद्ध ने यश के बाद उसके माता-पिता और उसकी पूर्व पत्नी को भी धर्म सिखाया और वे तीनों स्रोतापन्न अवस्था को प्राप्त हुए। ये तीनों भगवान के **प्रथम गृहस्थ अनुयायी** हुए।

५- इसी स्थान पर व्यापारी समाज के **चौवन युवक** जो यश के अभिन्न मित्र थे, भगवान की शिक्षा के प्रति आकर्षित हो कर प्रव्रजित हुए और अरहंत हुए।

६- इसी स्थान पर भगवान के साथ उन साठ अरहंतों ने **प्रथम वर्षावास** किया।

७- इसके समापन पर भगवान ने उन साठ अरहंतों को धर्मदूत बना कर बहुतों के हित-सुख के लिए लोगों पर अनुकंपा करते हुए **चरथ भिक्खवे, चारिकं** का ऐतिहासिक मार्गदर्शन उपदेश देकर स्थान-स्थान पर शुद्ध धर्म सिखाने के लिए भेजा।

८- यहीं से शुद्ध धर्म प्रवहमान हुआ और यहीं से शुद्ध धर्म का प्रसारण आरंभ हुआ।

यहाँ और भी कई दर्शनीय स्थान हैं।

यहीं **धम्म चक्क** विपश्यना केंद्र के निर्माण की योजना है, जिसके लिए १३ एकड़ भूमि उपलब्ध कर ली गई है। उसके बन जाने पर भगवान की इस आशुफलदायिनी साधना द्वारा अनेकों का कल्याण निश्चित है। सभी धर्म-यात्रियों ने दोपहर का भोजन इसी

भूमि पर किया।

सारनाथ में बरमा से लौट कर आयी हुई विपश्यना का प्रथम शिविर ११-९-१९६९ में लगाया गया था।

आज २० फरवरी २००१ को तिब्बती रिसर्च इंस्टीट्यूट द्वारा पूज्य गुरुदेव श्री सत्यनारायण गोयन्का जी को **विद्यावाग्पति** की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया। तदनंतर पूज्य गुरुजी का ऐतिहासिक धर्म-प्रवचन हुआ। स्थान महाबोधि मंदिर के समीप खुले मैदान में। समय रात्रि ८.३० से ९.३० बजे।

इसके बाद वापिस बनारस स्टेशन पहुँचे, भोजन किया और हमारी गाड़ी रात्रि ११-३० बजे बोधगया के लिए रवाना हो गयी।

(क्रमशः....)

भूकम्प-पीड़ितों के लिए बड़े विपश्यना शिविर

गुजरात के तीनों विपश्यना केंद्रों –धम्मसिन्धु, धम्मकोट और धम्मपीठ पर भूकम्प-पीड़ितों को बड़ी संख्या में शिविर में सम्मिलित करने की योजना बनायी गयी है। जो भी साधक-साधिकाएंइस पुण्य में भागीदार बनना चाहें वे अपने चेक या ड्राफ्ट "**सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट,** इगतपुरी" को भेजते हुए कृपया स्पष्ट लिखें कि यह दान "भूकम्पराहत शिविर" के लिए है।

नव नियुक्तियां

सहायक आचार्य

१) श्रीमती ऊषा किरण तलवार, नई दिल्ली
२) श्री अभिजीत पाटील, नाशिक
३) श्री दीपक पगारे, मनमाड
४) श्री मणिलाला कालरिया, राजकोट
5) Mrs Claudia Hackfort, Greece
6) Mr Kostas Lempidakis, Greece

दोहे धर्म के

श्रद्धा जागी बुद्ध पर, चलूं बोधि के पंथ।
बोधि जगाऊं स्वयं, मंगल मिले अनंत॥

श्रद्धा जागी धर्म पर, चलूं धर्म के पंथ।
सब पापों का हनन कर, बनूं स्वयं अरहंत॥

श्रद्धा जागी संत पर, बढ़ूं शांति के पंथ।
शांति समाये चित्त में, होय दुखों का अंत॥

श्रद्धा तो जागे मगर, छूटे नहीं विवेक।
श्रद्धा और विवेक से, मंगल जगे अनेक॥

श्रद्धा तो जागे मगर, अंध न बनने पाय।
प्रज्ञा ज्ञान प्रदीप की, ज्योति नहीं बुझ पाय॥

धर्म सदा जागृत रहे, प्रज्ञा पड़े न मंद।
ऐंद्रिय सुख को भ्रांतिवश, मान न नित्यानंद॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
-४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२.
-४८६१९०, • दिल्ली- २९११९८५,• पटना- ६७१४४२,• वाराणसी- ३५२३३१,
• बैंगलोर- २२१५३८९,• चेन्नई- ४९८२३१५,• कलकत्ता-२४३४८७४
की मंगल कामनाओंसहित

दूहा धरम रा

श्रद्धा भक्ति विवेक स्यूं, हुवै निपट निस्काम।
तो चित सदगुण स्यूं भरै, पूगै मंगळ धाम॥

गुण धारण कर ईस्ट रा, मुक्त मैल स्यूं होय।
हुवै कामनाहीन जद, भगती निरमळ होय॥

भीतर रो चेतो रवै, उदय अस्त रो ग्यान। कर्मकांड
ना बण सकै, जो कुछ करै सुजान॥

भगती तो दूसित हुई, दरसण होग्या झूठ।
मुक्ति मोक्छ निरवाण रो, गयो राजपथ छूट॥

भगती जद निरमळ हुवै, दरसन सम्यक होय।
तो पग पग पथ पर चलै, सहजां मुक्ती होय॥

पग पग पग अनुभव करै, बढै धरम रै पंथ।
तो भव-बंधन स्यूं छुटै, हुवै दुखां रो अंत॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ -४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
०२२- २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ८४०८६, ८४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४५, ज्येष्ठ पूर्णिमा, ६ जून, २००१**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. २५०/-, " US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६**/७१. Regn. No. AR/NSK-46/2000,

Licenced to post **without Prepayment of postage** -- Licence number-- **AR/NSK-WP/3**
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not deliverd please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) ८४०७६
फैक्स : (०२५५३) ८४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
E-mail: <dhamma@vsnl.com>